कहानी

गंध

गीता पंडित

जून की झुलसा देने वाली दोपहर, घर के आँगन में कुछ स्त्रियाँ एकत्रित हैं और वार्तालाप चल रहा है. मैं बराबर सटे हुए अपने कमरे में हूँ. दरवाज़ा खुला है. बस पर्दा पड़ा है जहाँ ये सारी आवाजें आराम से सुनी जा सकती हैं.

मैं सुनना नहीं चाहती. सोना चाहती हूँ लेकिन इन आवाजों के कारण सो नहीं पा रही. अंततः उठकर बैठ जाती हूँ और जैसा कि मेरी आदत है या कहें शौक उससे भी अधिक मेरी ज़रूरत कि खाली होते ही डायरी मेरे साथ होती है. आधी रात तक जाने उसमें क्या-क्या लिखती रहती हूँ. डायरी मेरी बेस्ट फ्रैंड हैं लेकिन आवाजें इतनी तेज हैं कि डायरी भी नहीं लिख पाती. एक स्त्री कह रही है -सुना है तेरी बहु बड़ी पढी-लिखी और सलीके वाली है. सारे घर का काम-काज उसने संभाल लिया है. किस्मत वाली है तू कमली रानी. वैसे एक बात तो बता उसे कुछ दिन-विन चढ़े भी या नहीं. नहीं अभी तो नहीं. शादी को एक साल हो गया अब तक तो दिन चढ़ जाने चाहिए थे. अरी! अपनी वो दाई है ना उसे दिखा दे वह अंदर (योनी में) कोई दवाई रखती है चार-पांच दिन तक रोजाना और गर्भ ठहर जाता है. हाँ, एक बात तो है उस दवाई की तासीर बहुत गर्म होती है. कुछ परेशानी भी हो सकती है छोरी को. वही स्त्री कुछ सोचकर दोबारा बोली- अच्छा, एक बात और सुन वो पढ़ी लिखी है तो क्या दवाई रखने देगी? मैं सुनकर सकपका जाती हूँ. यह सब क्या हो रहा है ? ये मेरी ही तो बात कर रही हैं. अभी तो केवल एक साल विवाह को हुआ है ऐसी भी क्या जल्दी है. उस पर इतने अच्छे-अच्छे डॉक्टर्स के होने के बावजूद मेरा इलाज़ दाई करेगी. ओह माय गोड!!! मैं कहाँ फँस गयी. तभी माँ की दी हुई हिदायत याद आती है.

कभी किसी बात के लिए ना नहीं कहना. जो जैसा कहे बस वही करना है. याद रखना. तभी मोटी-मोटी किताबों में लिखे अक्षर आँखों के सामने नाचने लगते हैं- 'ना कहना सीखना होगा. अन्याय को सहना स्वयं भी अन्याय करने जैसा है.' अंतरद्वंद के बीच फँसी मैं जाने कब तक सोचती रही. इतनी पढ़ाई-लिखाई का क्या फ़ायदा अगर मैं वो नहीं कर सकती जो उचित है. मेरे अन्दर एक द्वंद बराबर चलता रहा. मैं निरंतर अपने आप से संघर्ष कर रही थी.

मैं कभी भी भीड़ का हिस्सा बनना नहीं चाहती थी लेकिन समय मुझे भीड़ में शामिल करने के लिए अपने सारे दाँव पेच चला रहा है. क्या चुप रहकर समय का इंतज़ार करना ही श्रेयस्कर होगा या...या को मैं यूँ ही अनुत्तरित छोड़ देती हूँ. मैं तकिये में अपना मुँह गढ़ा लेती हूँ और आँख बंदकर के पड़ी रहती हूँ चुपचाप. तकिया भीगता रहता है. बाहर स्त्री पर आख्यान चलता रहता है. फ़तवे दिए जा रहे होते हैं. मेरी सोच और समझ पर ताले लगाये जा रहे होते है.

कहीं पढ़ा था कि अगर किसी को मारना हो तो सबसे पहले उसके विचारों को, उसकी सोच समझ को समाप्त कर दो ताकि उसकी हत्या अपने आप हो जाये. मैं मृत्यु के कगार पर खड़ी अपने आपको देख रही हूँ. देखती जा रही हूँ लेकिन कुछ नहीं कर सकती.

दाई को बुलाया जाता है. मैं निरीह प्राणी की तरह उसके सामने पेश कर दी जाती हूँ. वह अपनी मनमानी करती है. वह अनपढ़ होने के बावजूद अपने हुनर पर इतराती है. मैं पढी-लिखी होते हुए भी केवल परिवार बचाने की वजह से अनभिग्य बनी हुई हूँ इस बात से कि दाई जो कुछ भी कर रही है यह अनुचित है. उसने ग्लव्ज़ भी पहने हुए नहीं हैं. उसे मेरी योनी में दवाई रखनी है इन्हीं नंगे हाथों से. मैं देख रही हूँ, समझ रही हूँ और जानती भी हूँ कि इन्फेक्शन हो सकता है लेकिन मैं मूक हूँ. मुझे मूक ही रहना है. अभी भी बहुत से गाँवों में दाई ही बच्चे के जन्म के समय बुलाई जाती हैं लेकिन वहां जच्चा-बच्चा की मृत्यु-दर से मैं अनभिग्य नहीं हूँ फिर भी उसे करने देती हूँ.

चार दिन तक वह प्रतिदिन आती है. मेरी तरफ देखकर मुस्कराती है. मैंने हँसी ओढी हुई होती है. मैं भी मुस्कराती हूँ बिना मन के. ये चार दिन जैसे चार सदी से गुजरते हैं. सच, कितना मुश्किल है मुखौटे ओढ़े रहना और उस भेड़-चाल में शामिल होना जहाँ अपने से भी अजनबीपन की गंध आती है. ओह!!! यह गंध कितनी खतरनाक है. कितनी भयानक है ये इस समय मुझसे बेहतर कोई नहीं जानता. स्वयं से अजनबी हो जाना यानि अपने अस्तित्व को खो देना. उस अस्तित्व को जिसे बनाने में पूरे इक्कीस बाईस वर्ष लग गए. माता-पिता ने अपना सुख चैन त्यागकर जिसे करीने से सजाया. स्कूल कॉलेज जाने कितने सहयोगी हाथों ने थपथपाकर इस जीवन रूपी घड़े को एक मन पसंद सुंदर आकार में ढाला जिससे कि भरे हुए जल से सारी पृथ्वी आप्लावित हो सके

लेकिन यहाँ तो वह रीत रहा है और मैं रीतते हुए देख रही हूँ. ओह!!! इस रीतने का अहसास तक कितना भयानक है और मैं तो भोग रही हूँ. सह रही हूँ चुपचाप जैसे मेरी जुबान काट दी गयी है. मैं बोल सकती हूँ. मैं जानती हूँ कि मुझे बोलना चाहिए लेकिन मुझे बोलने की मनाही है. मैं आँख बंदकर के चुप पड़ी रहती हूँ जबकि अंदर एक ज्वालामुखी उबल रहा है. मैं तुम्हें याद कर रही हूँ

लेकिन तुम.....तुम कहीं नहीं हो. मेरा शरीर उन दवाईयों की गर्मी सह नहीं पाता. मेरे मुँह में छाले हो गए हैं. देह में एलर्जी भर गयी है. तेज बुखार है. यह गर्मी देह से उतरकर मन और मस्तिष्क को उबाल रही है. मैं इस उबाल को महसूस कर रही हूँ. चाहती हूँ चीखूँ. जोर-जोर से गला फाड़कर चीखूँ. लेकिन मेरी चीख मेरे अंदर ही घुट जाती है. दहाड़ मारकर रोना चाहती हूँ अपनी मृत्यु पर लेकिन कुछ भी नहीं करती. मैं एक नदी से ज्वालामुखी में परिवर्तित होती जा रही हूँ फिर भी चुप हूँ. विवाह के बाद विदा के समय कहे हुए माँ के शब्द बराबर कानों में गूँजते रहते हैं अब वही घर तुम्हारा है. वहाँ से केवल अर्थी ही निकलनी चाहिए .बेटियों के साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया जाता है ? मैं अभी तक भी नहीं समझ पायी. जहां से नाल का रिश्ता जुड़ा है वही पराया, आखिर क्यों ? मेरा मौन मुझे तोड़ रहा है लेकिन मेरा दिमाग चुप नहीं बैठता. वह बराबर सोच रहा है. क्या इस तरह से रिश्ते बचाए जा सकते हैं ? जब मैं ही नहीं बचूंगी तो इन रिश्तों का क्या होगा ? विवाह दो लोगों के बीच हुए सात फेरों का नाम नहीं, या दो देह का मिलन मात्र नहीं अपितु नाम है उस महा मिलन का जहां दो मन एक हो जाते हैं. जहां अलग-अलग सोच के होते हुए भी कहीं किसी बिंदु पर जाकर एक होते हैं और दोनों दोनों के विकास में सहायक होते हैं. यह प्रेम सबसे बड़ा हथियार बनता है जीवन की समस्याओं को सुलझाने में. लेकिन यहाँ तो स्थिति ही बिलकुल भिन्न है. सामने केवल दीवारें हैं. सारे रास्ते बंद हैं. चारों तरफ घना अन्धेरा है.

हाँ, एक रोशनी जो मेरे भीतर मौजूद है बस वही मुझे रोशन करती है और मैं रात की काली स्याही को सूरज की रोशनी में बदलने में कामियाब हो जाती हूँ. हर सुबह को फिनिक्स बनाने में अपना सर्वस्व दाव पर लगाती हूँ और शकुनी समय के द्वारा फेंके गये पासों से हर दिन द्रोपदी को चीर हरण से बचाती हूँ. तब लिखती हूँ लगातार. डायरी के पन्ने मुझसे बात करते हैं और मैं उस समय उस पुरुष में खो जाती हूँ जो मुझमें समाहित होकर भी मुझसे दूर और बहुत दूर है.

तन्हाई बढ़-चढ़कर बोलने लगती है और उदासी अपने अंक में समेट लेती है. कई प्रश्न एक साथ जंगली झाड़ियों की तरह उगकर लहूलुहान करने लगते हैं. आज मैं इतनी अकेली क्यूँ हूँ ? वो कहाँ है जिसने सात कदम साथ चलकर सात जन्मों की कसमें खाईं थी ? मैं पुरुष की सहचर के रूप में कल्पना करती हूँ जहां दोनों समान धरातल पर खड़े एक दूसरे का ध्यान रखते हैं. एक दूसरे को प्रेम और सम्मान करते हैं. जानती हूँ यह आदर्श स्थिति है लेकिन यहाँ से ही द्वंद और असमानता प्रारम्भ होती है जहां स्त्री के साथ वह होता है जो आज समाज में दिखाई दे रहा है और जो नहीं होना चाहिए. क्याइससे बेहतर विकल्प भी हैं जो स्त्री-पुरुष को एक साथ प्रेम और सम्मान के साथ खड़ा कर सकते हैं? मैं बारम्बार अपने आपसे प्रश्न कर रही हूँ. सच तो यह है कि स्त्री अपनी सुरक्षा कर सकती है. केवल सुरक्षा के लिए वह पुरुष का साथ चाहे यह आज के परिप्रेक्ष्य में मुझे हास्यास्पद लगता है. स्त्री तो प्रेम है और प्रेम के लिए पुरुष का साथ चाहती है. वह सक्षम है. उसे कमतर आँककर जो कुछ उसके साथ किया गया या किया जा रहा है, उसीके विरोध में ही तो खड़े होने की ज़रूरत मैं हमेशा महसूस करती रही हूँ लेकिन पुरुष का अहम इस बात की इज़ाजत नहीं देता और स्त्री को सुरक्षित करने के चक्कर में असुरक्षा प्रदान कर देता है.

आह!!! मैं भी तो आज उसी दोराहे पर खड़ी हूँ. वह पुरुष आगे बढकर और मजबूती से मेरा हाथ पकड़कर क्यों नहीं सामने आता ? और सही को सही और गलत को गलत क्यों नहीं कहता ? अकेला आख़िर कौन सी दुनिया में खोया हुआ है ? क्यों खोया हुआ है ? उसके स्वप्न अलग हो सकते हैं .क्या उसकी राहें अलग हैं ? अगर हैं तो ये चुप्पी क्यों है ? शेयर क्यों नहीं करता ?

अनेक प्रश्न मुझे उद्विग्न करते रहते हैं लेकिन समय के होठ हमेशा बंद रहते हैं और मैं उस समय की प्रतीक्षा में हूँ जब यह बोलेगा अपने पूरे होशो-हवास में तब ज़िन्दगी मुस्कराएगी, बातें करेगी लेकिन अभी तो वह उदास है. मुझे हमेशा लगता रहा है कि कोई भी समस्या ऐसी नहीं जिसका हल बातचीत से निकाला ना जा सके. विचार-विमर्श जरूरी है. सम्वाद ज़रूरी है. लेकिन ऐसा मैं ही तो सोच रही हूँ. अगर वह भी ऐसा ही सोचता तो आज मुझे सोचने की आवश्यकता नहीं होती. बहरहाल अभी तो सारे रास्ते बंद हैं और मुझे इन्हें खोलना है. उस गंध से भी छुटकारा चाहिए जिसमें मैं अपने आप से अजनबी हो रही हूँ. मैं डायरी रखकर कुछ किताबें निकालती हूँ. उन पर प्रेम से हाथ फिराती हूँ और पी.सी.एस. की तैयारी में लग जाती हूँ. मुझे यह परीक्षा पास करनी है. आर्थिक रूप से मजबूत होकर मैं इस माध्यम से अपनी और अपने जैसी असंख्य स्त्रियों को ऐसी पीड़ाओं से मुक्ति दिला सकूंगी. दाई फिर आई है. उसकी आवाज़ ने आज मुझे नहीं उराया क्योंकि इससे मुक्ति की राह मैंने खोज ली है. तभी उसकी बातें मेरे कान में पड़ती है. चार दिन की दवाई का कोर्स अब पूरा हो गया है. जल्दी ही खुशखबरी सुनने को मिलेगी. वह किसी से पूछ रही है- भैया कहाँ है ? दिखाई नहीं देता ? अरे, वह तो बाहर रहता है. माह दो माह में एक बार आता है. ओह! मुझसे यह क्या करवा दिया. फिर बींदनी के दवाई क्यों रखवाई ? तुम्हारी मति मारी गयी थी क्या? दवाई के साथ दोनों का साथ होना ज़रूरी था. हाय! कितने कष्ट सहे बेचारी ने. हे भगवान्, मुझे माफ़ करना.

क्लास by बड़े भाई

भलाई कभी बेकार नहीं जाती

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

छोटे भाई, भलाई करने से कभी मत ऊबना, यह तुम्हारे जीवन को कभी उबाऊ नही होने देगा. तुम सोच नही सकते, जितना तुम इसके बदले पा सकते हो. तुम्हारी भलाई के स्वभाव के कारण मिले कोई थोड़े बुरे अनुभवों पर ध्यान मत देना.

छोटे भाई, एक सच्ची घटना साझा करना चाहूँगा, जिसे सुनकर आपको अपने भलाई करने की आदत पर पछतावा नही होगा. यह घटना आपको अच्छे कामों के लिए सराहेगी और आपको कभी दुख नही होगा. हुआ यह कि अभी हाल ही में मेरी मुलाकात नोबल पुरस्कार से सम्मानित श्री कैलाश सत्यर्थी जी से हुई. उनके एक कार्यक्रम में मैं शामिल हुआ था. वहाँ उनका स्वागत किया गया. फिर इसके बाद उनका घंटे भर का बेहद शानदार व्याख्यान रहा. अब इसके बाद जो हुआ, वह बहुत गर्व और भावुक करने वाला क्षण था.

दरअसल जैसे ही कैलाश सत्यार्थी जी का व्याख्यान समाप्त हुआ और लोगों से सवाल जवाब के बाद वो जाने लगे तो उन्हें विनम्रता पूर्वक रोका गया.. और उन्हें बताया गया कि कोई उनसे मिलने के लिए बड़ी बेसब्री से उनके बाहर निकलने की राह देख रहे हैं. उनका कहना है कि आपने उन्हें सालों पहले बाल मजदूरी के चंगुल से बचाया था और उन्हें एक नया जीवन दिया था. आज वो अपने पैरों पर खड़े हैं.अच्छी नौकरी में हैं. कैलाश जी ने बड़ी विनम्रता से हामी भरी और उनको यहाँ मंच पर ही लाने को कहा.

जब उनसे मिलाया गया तो सत्यर्थी जी चूंकि लाखों बच्चों के बचपन को बचाने में अपना जीवन समर्पित कर दिया था. तो इस वजह से काफी समय बीत जाने के कारण वो उन्हें पहचान नही पा रहे थे लेकिन उसका स्नेह देखकर वो भावुक हो गए थे. उनको देखकर लग रहा था कि उनको संसार का जैसे सारा सुख मिल गया. सालों पहले बचाया गया एक बच्चा आज उनकी वजह से शनदार जीवन जी रहा था. अब वो उनके लिए समर्पित था. एक अपने हाथ से रोपे गए पौधे को सालों बाद भरा पूरा वृक्ष देखना हमेशा सुखद होता है.

तो छोटे भाई, इस तरह आपके आज के भलाई के काम आगे चलकर आपको सुखद अनुभूति कराते हैं. आपको अपने जीवन की सार्थकता और संतुष्टि देते हैं.

इसलिए कभी भी किसी के लिए कुछ अच्छा करने से आलस मत करिएगा. यह आपके जीवन को सारी कठिनाइयों से बचाती रहेगी क्योंकि वो कहते भी हैं न कि दिया है तो पाएंगे भी.

कविता

अनुराधा ओस

पुराने घण्टे की आवाज़

पुराने घण्टे की आवाज से
अलसाया शहर
चौंक कर जाग जाता है
घण्टाघर की घड़ी से
समय का मिलान कर

आने लगती हैं आवाज़ें
बीस रुपये किलो भिंडी
दस रुपये किलो आलू
पचास के प्याज
और लोग झोला भर -भर कर
सौदा सुल्फ़ खरीद लेतें हैं
जीने का सामान

दोस्तों !जीने के लिए
और भी चीज़ें जरूरी होती हैं
किसी की नज़र भर मुहब्बत
किसी की बांह का संबल
किसी चिड़िया की गाई हुई नज़्म
और सहलाती हुई हवा
ये तमाम बातें भी जरूरी
होती हैं।

लघु कथाएं

पंख

डॉ. उपमा शर्मा

मैं अस्पताल के कमरे में लेटी हूँ. मेरे पास मेरी गुलगोथनी प्यारी सी बेटी लेटी है. मेरी नन्ही सी बेटी ने अभी आँखें खोली हैं.अपनी छोटी सी अँगुली से कस के मेरी अँगुली दबा रखी है.बाहर उसके पापा खुशी से सबको मिठाई खिला रहे हैं. दादी उलाहने दे रही हैं लड़की होने पर कौन मिठाई खिलाता है ?

1 अप्रैल 2003

मेरी बेटी का आज स्कूल का पहला दिन है. नन्हें हाथों से मुझे बाय कर बैग, बॉटल लेकर स्कूल जा रही है.मैं बहुत खुश हैं.

26मार्च 2004

आज मेरी बेटी का रिजल्ट आया है. पूरे क्लास में दूसरे नम्बर पर हैं. मुझे लग रहा है अलमारी में रखे मेरे टूटे हुए पंखों में आज हरकत सी हुई है.

15 मई 2016

मेरी बेटी खुशी- खुशी पूरे घर में घूम रही है. बोर्ड में टॉप किया है. मैं भगवान से आँखें बंद कर उसके लिए प्रार्थना कर रही हूँ.

8 जुलाई 2017

आज मेरी बेटी अवनि का कॉलेज का पहला दिन है.खुशी से उमग रही है.कॉलेज के लिए उसकी दादी कितनी मुश्किल से मानी हैं. उसके पापा ने अपनी माँ को बहुत मुश्किल से मनाया है.

10 अक्टूबर2017

मेरी बेटी उदास बैठी है. क्लास कॉलेज ट्रिप पर जा रही है.उसे घर से परमीशन नहीं मिल रही. दादी के साथ आज पापा ने भी उसे मना कर दिया है.उनका कहना है कॉलेज पढ़ने को भेजा है यह फालतू चोंचले बिगड़े बच्चों के काम हैं.मेरे पंख फिर कराह रहे हैं. वो सूनी आँखों से मुझे देख रही है. मैंने नज़रें चुरा ली हैं.

20 जून 2020

मेरी बिटिया पूरे घर में नाचती फिर रही है. उसका सपना पूरा हुआ. दिन-रात की मेहनत सफल हुई.मेडीकल की एंट्रेंस परीक्षा क्लीफाई करने की चमक चेहरे पर साफ़ दिख रही है. मेरे पंख नाच रहे हैं.थोड़ी उदास भी हूँ.अब पढ़ने के लिए शहर से बाहर जाना होगा उसे. मैं कैसे रहूँगी उसके बिना. वो लाड़ से गले में हाथ डाल बोल रही है रोज वीडियो कॉल करेगी. मैं मुस्कुरा देती हूँ.

25 अगस्त 2022

घर में कोहराम मचा है. दादी और पापा उसे बाहर भेजने को राजी नहीं. दादी अपनी सहेली के पोते को बिटिया के लिए पसंद भी कर चुकी हैं. अगले दिन लड़के वाले आने वाले हैं.

26 दिसम्बर 2022

रात भर रो रोकर उसकी आँखें सूज गई हैं.कोई नहीं सुन रहा. आज दादी के साथ उसके पापा भी विवाह पर अड़े हैं.अवनि लगातार रो रही है.इतनी छोटी बच्ची का विवाह !मुझे बीते पल याद आ जाते हैं. मेरे कतरे हुए पंख गिर जाते हैं. मैं अचानक दुर्गा बन जाती हूँ.मेरे पंख कराह उठते हैं.नहीं- नहीं जो मेरे साथ हुआ मेरी बेटी के साथ नहीं होगा.

मैं लड़के वालों से क्षमा माँगती हूँ.

अवनि के लिए आज मैं सबसे लड़ूँगी.बिटिया का साथ ले जाने का सामान पैक करती हूँ.अवनि मुस्कुरा रही है. अपने पंख मैंने आज अपनी बेटी को दे दिए हैं.

छाता

बहुत तेज़ बारिश हो रही था. नीरा बालकनी में खड़ी थी. सामने की दुकान की छत के नीचे वही खड़ा था जो कभी नीरा की दुनिया के हर कोने में साँस लेता था.

छाता आज भी था उसके पास, लेकिन जगह-जगह से फटा हुआ. बारिश उसके कंधों से फिसल रही थी, बाल भीगकर माथे से चिपक गए थे.

नीरा उन दिनों में लौट गई, जब हर बार वो अपने छाते में उसे जगह देती थी. मुश्किलों की बारिश हो या जीवन की तपती धूप नीरा ने हमेशा उसे छाँव दी.

वो हँसता, इतराता, खुद को दुनिया का सबसे समझदार इंसान समझता.और जब नीरा इस बारिश में भीग परेशान हो जाती, वो कहता, तुम ज़रूरत से ज़्यादा सोचती हो इसीलिए परेशान हो जाती हो.

वक़्त के साथ नीरा का छाता पुराना होता गया. बोझ से झुकने लगा था. एक दिन नीरा ने अपने घर के दरवाजे उसके लिए बंद कर दिए बिना कोई शोर किए. न इल्ज़ाम, न शिकवा. सिर्फ़ आईने में देख बोली, अब किसी के लिए खुद को नज़रअंदाज़ नहीं करूँगी.

आज, फिर वह सामने था. उसने नीरा की ओर देखा.

वो रेलिंग पर खड़ी थी, हाथ में चाय का प्याला थामे.

ये पहली बारिश थी जिसमें नीरा भीगी नहीं बल्कि, खुद को भीगने से बचा लिया था.

रम्य रचना

सीमा फरहीन

आत्म उजास

मन बदरंग, तन पत्थर हुआ जाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है

इच्छाएं पतंग सी ऊंची उड़ान लेती हैं
खुली हवा में अस्तित्व भान लेती हैं
यथार्थ डोर पथरीले धरातल पर खींच लाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है

मचलती है इच्छा समंदर में गोते खाने को
स्वपनों के मोती चुन चुन के बाहर लाने को
निष्ठुर समंदर साथ लहरों के साहिल पे पटक जाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है

नही रुकती दौड़ पड़ती है बर्फीले पहाड़ों पर
कान नही धरति ,रोकने वाले दहाडों पर
चोटी पर पहुँच बेचारी का पैर फिसल जाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है।

गिरकर संभलती है, चल पड़ती है जंगल की ओर
नही पता उसको इस जंगल का कोई ओर छोर
कंटीली झाड़ियों से बदन छलनी हुआ जाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है।

आसमान ,समंदर,पहाड़ कहीं ठौर नही
इस ब्रह्मांड में क्या मेरे लिए कोई पौर नही
मुझे अंक में भर ले क्या ऐसी कोई कौर नही
सोच सोच मन उदास हुआ जाता है
आत्म उजास को बाहरी अंधेरा निगल जाता है।

टूटने वाली थी कि, आत्म विश्वास ने दी हुंकार
उसके पथराए तन में फैल गई तीव्र झंकार
बदन लहराया उसने मारी ज़ोर की फुंकार
इस फुंकार से संसार सहम जाता है
अब आत्म उजास को बाहरी
अंधेरा नही निगल पाता है.

पुस्तक समीक्षा

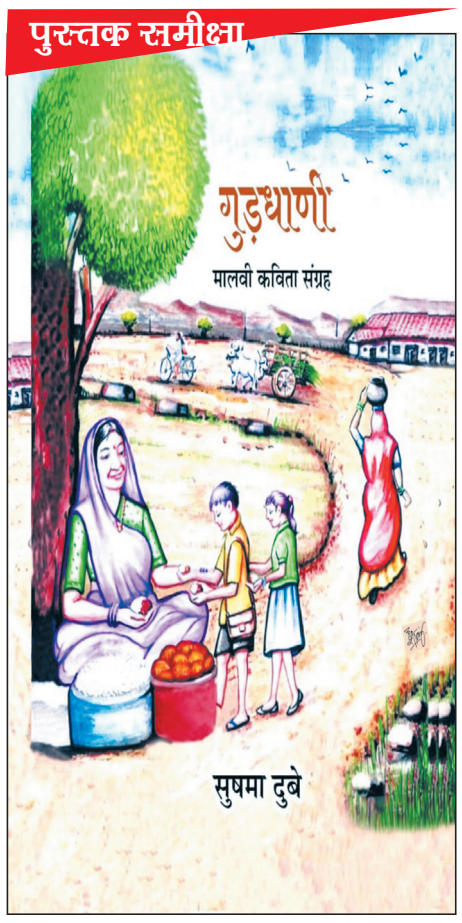

सुषमा व्यास राजनिधि

मालवी संस्कृति की महक को सहेजती गुड़धाणी

लोकभाषा, लोकसाहित्य और लोककला हमारे समाज की उन्नति और विकास में बड़ी भूमिका निभाते हैं. जिस भाषा या बोली का साहित्य समृद्ध हुआ, जिसने उसे जीवित रखा, वह अपने अंचल की संस्कृति की सशक्त पहचान बनाए रखता है.

मालवा तो कई मायनों में समृद्ध है. मालवी की मीठी-भीनी गंध की कविताएँ रचने वाली सुषमा दुबे के ताज़ा कविता संग्रह गुड़धाणी की कविताओं ने अपनी दमदार उपस्थिति मालवी साहित्य में दर्ज कराई है.

मालवा की लोक संस्कृति में आवभगत के भाव से जुड़ा है शब्द गुडधाणी. गुड बोली की मिठास को समेटे है तो धाणी परंपरा और सौभाग्य को प्रतीकात्मक इंगित करते हैं. हरियाली अमावस और दुल्हन विदा होने पर हाथ से पीहर में धानी लुटाना का रूपक भी इन्हीं अर्थों में है.

कविता-%साईकिल भी मर्सिडीज कार सी लगती थी% में मालवी बचपन को बहुत खूबसूरती से दर्शाया गया है.कई बतावां तमारे, कदी या जिनगी नवाब सी लगती थी.

गुड की मीठी गांगडी बी आमपाक सी लगती थी.

संग्रह में बेटियों पर तीन कविताएं हैं और तीनों ही अलग-अलग भाव कीं.

बिना चायना के घर अई जावे बेटी ना, ने उनाज घर खे सरग बणावे बेटी ना

सुषमा जी की कविताएं पंच पल्लव की तरह है. हमारी संस्कृति में ये कई रूपों में आते हैं.बहुत पवित्र माना गया है.

बरगद, पीपल, गूलर, पाकर और आम.

सेर का तमाशा और सुरेस की बई कविताएँ आधुनिकता पर तमाचा है. बांदरा ने बांदरी को वेलेंटाइन डे कविता में हरष बावले नटखट बंदर के ज़रिए लेखिका ने युवा पीढ़ी को धैर्य और समझदारी से कार्य करने की सलाह दी है. मालवी मनक की विशेषता होती है कि वह अपनी बोली में प्रेम से व्यंग्य कर देता है और मालूम भी नहीं पड़ता. व्यंग्य का यह पुट इन कविताओं में भी दिखाई देता है, सहज व्यंग्य करते हुए उन्होंने आधुनिक समाज की विसंगति, असमानता, अराजकता, छूटते संस्कार, और आज के जीवन की चकाचौंध पर करारा प्रहार किया है लेकिन अपने अंदाज़ में. धरती से सरगज भलो, भूली गया%, गेल्या गाम ऐसी ही कविताएं हैं.

सुषमा जी की कविताएं उन परंपराओं, रिवाजों और बातों को सामने लाती हैं, जिन्हें हम भूलते जा रहे हैं. हमें वापस हाथ पकड़ कर ये कविताएँ मानो उसी जमाने की ओर खींच लाती हैं. अगरनी (खोल भरने की प्रथा) जो अब लुप्तप्राय हो रही है. छकडो (जिसकी जगह कार ने ले ली है. ऐसी ही कविताएं है. इन्हें पढ़कर लगता है कि जमाना बदल गया पर नहीं बदली तो हमारी सुहानी यादें, गांव की वह खूबसूरत सीधी-साधी दुनिया, चमकते खिलखिलाते हम.

संग्रह में अलग-अलग तरह से मानवीय छवि दिखलाई पड़ती है और हम उसे अपने अंदर तक महसूस करते हैं.

इस आधुनिक वैभवशाली समाज में मालवी केवाड़ा, शादी ब्याह, संजा बई के गीत, कहावतें, तीज त्यौहार मान्यताएं भूल रहे थे, वे सब इस किताब ने याद दिला दिए. जैसे-लाड़ा के लाड़ी प्यारी ने जान बाराती के खाणो प्यारे लागे, दूर का डूंगर सुहावना लागे, बात कूं सौ टका की, कदी नी बने रे बाप बेटा की, माय जब तक मामो ने बाप जब तक काको, या केवात सौ टका खरी कि पईसा नी तो कुण बाप ने कुण धनी है

मालवी लोकगीतों को भी संग्रह में शब्द, भाव व्यंजना से जोड़ा गया है कि उसकी मधुरता पाठक को डुबोते देते हैं. जहां गंभीरता है, वहीं सहज हंसी ठिठोली भी है. चटोरी सासु, बऊ आई भयंकर म्हारी माय का जंवई ऐसे ही कविताओं में कहीं प्यार को याद किया है. . सावन मास से लेकर सपने देखने तक, पावणा आने तक सब कुछ सुंदरता से लिखा है.

यह संग्रह एक पोटली है जिसमें शब्दों और भावों का खजाना है जो जादू के पिटारे सी हमारे सामने खुलती है.

गुड़धाणी (मालवी काव्य संग्रह)
सुषमा दुबे
विनायक प्रकाशन,इंदौर
मूल्य - 220 रुपए

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी